एक शंख बिन कुतुबनुमा

शरद जोशी

जिसे कहते हैं दिव्य, वे वैसे ही लग रहे थे। किसी त्वचा मुलायम करने वाले साबुन से सद्य नहाए हुए। उन्नत ललाट और उस पर अपेक्षाकृत अधिक उन्नत टीका, लाल और हल्के पीले से मिला ईंटवाला शेड। यह रंग कहीं बुश्शर्ट का होता तो आधुनिक होता। टीके का था, तो पुराना। मगर क्या कहने! बाल लंबे और बिखरे हुए। स्वच्छ बनियान और श्वेत धोतिका (मेरे ख्याल से प्राचीन काल में ज़रूर धोती को धोतिका कहते होंगे), चरणों में खड़-खड़ निनाद करने वाले खड़ाऊं। किसी गहरे प्रोग्राम की संभावना में डूबी आंखें। हाथ में एक नग उपयोगी शंख। सब कुछ चारु, मारू और विशिष्ट।

उस समय सूर्य चौराहे के ऊपर था। लंच की भारतीय परंपरा के अनुसार डटकर भोजन करने के उपरांत मैं पान खाने की संस्कृति का मारा चौराहे पर गया हुआ था। वहीं मैंने उस तेजोमय व्यक्तित्व के दर्शन किए।

"बाबू उत्तर कहां है, किस ओर है?"

मुझे अपने प्रति यह बाबू संबोधन अच्छा नहीं लगा। आज मैं सरकारी नौकरी में बना रहता, तो प्रमोशन पाकर छोटा-मोटा अफसर हो गया होता और एक छोटे-से दायरे में साहब कहलाता। खैर, मैंने माइंड नहीं किया। जिस तरह दार्शनिक उलझाव में फंसा हुआ व्यक्ति जीवन के चौराहे पर खड़ा

हो एक गंभीर प्रश्न मन में लिए व्याकुल स्वरों में पुकारे कि उत्तर कहां है, कुछ उसी तरह मैंने मन में समझ लिया कि किसी छायावादी आलोचक की कोई पुस्तक इस व्यक्ति के लिए मुफीद होगी। अपने स्वरों में एक किस्म की जैनेन्द्री गंभीरता लाकर मैंने पूछा — "कैसा उत्तर भाई, तुम्हारा प्रश्न क्या है?"

अपने दिव्य नेत्रों से उन्होंने मेरी ओर यूं देखा, जैसे वे किसी परम मूर्ख की ओर देख रहे हों और बोले, 'मैं उत्तर दिशा पूछ रहा हूं बाबू!"

यह सुन मेरा तत्काल भारतीय-करण हो गया। दार्शनिक ऊंचाई से गिरकर एकदम सड़क छाप स्थिति।

"आपको कहां जाना है?" मैंने सीधे सवाल किया। शहरों में यही होता है। अगर कोई व्यक्ति दूसरे से पूछे कि पांच नंबर बस कहां जाती है, तो उसे जवाब में सुनने को मिलता है कि आपको कहां जाना है? राह कोई नहीं बताता, सब लक्ष्य पूछते हैं, जो उनका नहीं है।

"उत्तर दिशा किस तरफ है बाबू, आप पढ़े-लिखे हैं, इतना तो बता सकते हैं ......?"

मुझे अच्छा नहीं लगा। हर बात के लिए शिक्षा -प्रणाली को दोषी मानना ठीक नहीं। पढ़े-लिखों को उत्तर मालूम होता, तो अब तक देश के सभी प्रश्न सुलझ जाते। जहां तक मेरी स्थिति है, सही उत्तर मैंने परीक्षा भवन में भी नहीं दिया, तो यह तो चौराहा है। मैं क्यों देता? और क्या देता?

"क्या आपको उत्तर दिशा की ओर जाना है?" स्वर में मधुरता ला मैंने जिज्ञासा की।

"मुझे उत्तर दिशा की ओर मुंह कर यह शंख फूंकना है।" उन्होंने कहा, "आप बता दें तो मैं फूंक दूं।"

मैंने कमर पर हाथ रख सारा चौराहा घूमकर देखा, मगर उत्तर दिशा

कहीं नज़र नहीं आई। दाईं ओर एक लांड्री थी, बाईं ओर पानवाला और उसके पास साइकिल वाला। सामने एक पनचक्की थी। एकाएक मुझे स्कूल में पढ़ी एक बात याद आई कि यदि हम पूर्व की ओर मुंह करके खड़े रहें तो हमारे दाएं हाथ की ओर दक्षिण तथा बाएं हाथ की ओर उत्तर होगा। वामपंथ और दक्षिणपंथ के मतभेद यहीं से शुरू होते हैं।

"देखिए, यदि आप मुझे पूर्व दिशा बता दें, तो मैं आपको उत्तर दिशा बता सकता हूं।" मैंने प्रस्ताव रखा।

"सूर्योदय जिधर से होता है, वही पूर्व दिशा है।"

"जी हां।"

"किधर से होता है सूर्योदय?" पूछने लगे।

"मुझे नहीं पता। मैं देर से सोकर उठता हूं।"

उन्होंने अपने दिव्य नेत्रों से मेरी ओर यूं देखा, जैसे वे किसी परम आलसी की ओर देख रहे हों और बोले, "आप सोते रहते हैं, सारा देश सोता रहता है और कलिकाल सिर पर छा गया है। चारों ओर पाप फैल रहा है, धर्म का नाश हो रहा है।"

"हरे-हरे!" मैंने सहमति सूचक ध्वनि की।

"उत्तर दिशा पापात्माओं का केन्द्र है, राजधानी दिल्ली अधर्मियों का बड़ा अड्डा बन गई है।"

"नहीं, ऐसा तो नहीं, स्थानीय चुनावों में तो धार्मिक लोग जीतते हैं।" मैंने कहा।

"मैं पार्लियामेंट की बात कर रहा हूं बाबू, संसद भवन और शासन की।"

"आप वहां जाकर कुछ अनशन-वनशन करेंगे?" मैंने पूछा।

"नहीं, मैं यह दिव्य शक्ति संपन्न शंख उत्तर दिशा की ओर फूंकूंगा। इसका स्वर दिगन्त तक गूंज उठेगा और उत्तर दिशा की पापात्माएं इसका स्वर सुनकर नष्ट हो जाएंगी।"

"शंख क्या एकदम बिगुल हुआ। आप इसे माइक के सामने फूंकेंगे।" मैंने नम्र जिज्ञासा की।

"बाबू समय आ गया है।" उन्होंने सिर के ठीक ऊपर चमकते हुए सूर्य की ओर देखा और कहा– "मुझे ठीक मध्याह्न में शंख फूंकना है। आप जल्दी बताइए, उत्तर दिशा किधर है?"

"आप चारों ओर घूमकर सभी दिशाओं में इसे फूंक दीजिए, पाप तो सर्वत्र फैला हुआ है।"

"नहीं, केवल उत्तर दिशा में। गुरुजी की यही आज्ञा है। उत्तर में सत्ता का केन्द्र है। पहले उसे अधिकार में लेना होगा। फिर वहीं से सर्वत्र पुण्य फैलेगा।

बताइए, शीघ्र बताइए, मेरी सात दिनों की मंत्र-साधना इस छोटी-सी सूचना के अभाव में नष्ट हुई जाती है।"

दोपहर का समय, कोई जानकार व्यक्ति वहां से गुज़र भी नहीं रहा था। पानवाले, लांड्रीवाले, पनचक्कीवाले से पूछना व्यर्थ। तभी मैंने देखा, दो लड़के कंधों पर बस्ता रखे चले जा रहे हैं। मैंने उन्हें रोका और बच्चों के कार्यक्रम के कंपीअरवाली मधुरता से पूछा, "अच्छा बच्चो, ज़रा यह तो बताओ कि यदि हमें कभी यह पता लगाना हो कि उत्तर दिशा कहां है, तो हम क्या करेंगे?"

वे आश्चर्यपूर्ण मिच-मिची आंखों से कुछ देर मेरी ओर देखते रहे। फिर उनमें से एक जो अपेक्षाकृत तेज़ था, उसने कहा – "ध्रुवतारा उत्तर दिशा में चमकता है। यदि हम उस ओर देखते हुए सीधे खड़े रहें तो हमारे सामने उत्तर, पीठ पीछे दक्षिण, दाहिनी ओर ....।"

"शाबाश बच्चो, मगर जैसे दिन का समय हो और किसी को यह जानना हो कि उत्तर दिशा कहां है, तो उसे क्या करना होगा?" मैंने उन्हें बीच में रोककर फिर पूछा।

"इसके लिए हमें कुतुबनुमा देखना चाहिए, जिसकी सुई सदैव उत्तर दिशा बतलाती है।"

"शाबाश बच्चो, धन्यवाद!" मैंने दिव्य व्यक्ति से पूछा, "आपके पास कुतुबनुमा है?"

"क्या होता है कुतुबनुमा?" दिव्य उत्तर मिला।

"अच्छा बच्चो, यदि किसी के पास कुतुबनुमा न हो, तो वह उत्तर दिशा कैसे पहचानेगा, ज़रा यह बताओ।"

"यह हमें नहीं पता।"

"हमारे कोर्स में नहीं है।" दूसरे बच्चे ने कहा।

मैंने दिव्य व्यक्ति की ओर असहाय दृष्टि से देखा। जवाब में उन्होंने सूर्य की ओर देखा, फिर शंख की ओर देखा।

"एक कुतुबनुमा इस समय होना ज़रूरी है।"

"क्या होता है कुतुबनुमा?"

"एक प्रकार का यंत्र होता है, जो दिशा बताता है।" मैंने जवाब दिया।

"धिक्कार है, हम दिशा जानने के लिए भी यांत्रिकता के गुलाम हो गए। दिशाएं तो चिरकाल से अटल हैं और सदा रहेंगी परंतु हम उन्हें भूल गए। हम सब कुछ भूल गए।"

"ठीक कह रहे हैं आप। मैं तो शंख बजाना भी भूल गया। छोटा था तब खूब बजा लेता था। हमारी क्रिकेट टीम के किसी खिलाड़ी का एक रन भी बन जाता या हमारे बालक से एक विकेट भी आउट हो जाता, तो मैं

खुशी में बाउंड्री पर खड़ा शंख बजाया करता था।'' मैंने कहा।

''साधना का यह चरम क्षण व्यर्थ जा रहा है बाबू, मैंने सात दिनों तक यंत्र साधना कर इस शंख में वह शक्ति उत्पन्न की है कि जिधर फूंक दूं, वही दिशा भस्म हो जाए; पर मुझे यह बताने वाला कोई नहीं है कि उत्तर दिशा कहां है? कहां है उत्तर दिशा, कहां है?'' उन्होंने व्यथित स्वरों में कहा और शंख हाथ में ले चारों ओर घूमने लगे और उनके साथ मैं भी घूमने लगा।

क्या किया जा सकता था? उनकी पीड़ा उस ऐक्टर की तरह थी, जो महाभारत ड्रामे में पार्ट कर रहा हो – ''हाय, यह ब्रह्मास्त्र कहीं गलत न छूट जाए, नाथ?''

वह तेजोमय उन्नत ललाटवाला व्यक्ति अपने करों में एक दिव्य शक्ति संपन्न शंख लिए खड़ा पूछ रहा है – ''उत्तर दिशा कहां है!'' इसका उत्तर किसी के पास नहीं है।

सच यह है कि कुतुबनुमा नहीं है। एक वैज्ञानिक तथ्य का अभाव सारी मंत्रबल की, आत्मबल की शक्ति को निरर्थक कर रहा है।

''परम श्रद्धेय!'' मैंने हाथ जोड़कर कहा, ''जब तक शंख से कुतुबनुमा अटैच नहीं होगा, आपकी साधना इसी प्रकार व्यर्थ जाएगी। कुतुबनुमा अनिवार्य है।''

उन्होंने अपने दिव्य नेत्रों से मेरी ओर यूं देखा, जैसे वे किसी परम नास्तिक की ओर देख रहे हों, जिसे भारतीय संस्कृति का मर्म नहीं मालूम। मैं डर गया। कहीं आवेश में वे अपना शंख मुझ पढ़े-लिखे पर ही नहीं फूंक दें, जो उत्तर दिशा नहीं जानता।

सूर्य अपनी बारह बजे वाली ऊंचाई से हट रहा था। साधना का उच्चतम क्षण खिसक रहा था। तेजोमय ललाट का वह दिव्य व्यक्ति काफी देर तक चौराहे पर निराश-सा पैर पटकता रहा और फिर अपना शंख लिए एक ओर चला गया।

मैं क्या कर सकता था। पता नहीं, उत्तर थी या दक्षिण, मगर पानवाले की दिशा में बढ़ जाने के अतिरिक्त मैं क्या कर सकता था!

शरद जोशी: हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध व्यंग्यकार। व्यंग्यकथाएं, नाटक तथा अखबारों में नियमित स्तंभ लिखे हैं। 1991 में मृत्यु।

सभी चित्रः **मृणाल पुरोहित**: फाइन आर्ट में डिप्लोमा। होशंगाबाद में निवास।

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वारा प्रकाशित संकलन 'यथासम्भव' से साभार।